B.com-I, Group B, C & D (H) Group-A (S) | व्यावसायिक संगठन (Business organisation) | प्रो. सुनीत कु. सुमन आर एन कॉलेज (हाजीपुर)

Q.No.3. साझेदारी की परिभाषा दें तथा इसके गुण - दोषों का वर्णन करें ?

उत्तर

मानव स्वभावत: आत्मभिमानी होता है। वह सब काम स्वयं करना चाहता है। परन्तु प्रत्येक व्यक्ति की कार्यक्षमता एवं साधन सीमित होते हैं तथा बड़े पैमाने पर व्यापार करने के लिए व्यक्तियों के सहयोग की आवश्यकता पड़ती है। ऐसी अवस्था में व्यक्ति अन्य अनुभवी व्यक्तियों की खोज करता है जो उसे पर्याप्त सहयोग दे तथा समुचित पूँजी भी लावें। साझेदारी इसी खोज का परिणाम है।

सामान्यत: साझेदारी दो या दो से अधिक व्यक्तियों की एक संस्था को कहते हैं जिनमें वे अपनी स्वतंत्र इच्छा से किसी निश्चित व्यापारिक समझौते के अनुसार वैधानिक व्यापार को चलाने, अपना स्वामित्व रखने तथा होने वाला सामूहिक लाभ प्राप्त करने के लिए निजी धन, सम्पत्ति, श्रम तथा अपनी कार्य कुशलता का सामूहिक प्रयोग करते हैं।

भारतीय साझेदारी अधिनियम 1932 की धारा 4 के अनुसार, "साझेदारी उन व्यक्तियों के पारस्परिक संबंध को कहते हैं जिनमें एक ऐसे व्यापार के लाभों को आपस में बाँटने का ठहराव किया है जिसे वे अपना सब अथवा उन सबकी ओर से कोई एक चलाता हो।"

उपर्युक्त परिभाषाओं के अध्ययन से साझेदारी के निम्नलिखित गुण दृष्टिगोचर होते हैं:

(i) एक से अधिक व्यक्ति का होना → साझेदारी होने के लिए यह परम आवश्यक है कि उसमें एक से अधिक व्यक्ति हों। साझेदारी अधिनियम में भी यह दिया हुआ है कि यदि किसी संस्था में मृत्यु अथवा दिवालिया होने के कारण साझेदारों की संख्या एक ही रह जाती है; तो ऐसी दशा में साझेदारी का अनिवार्य रूप से समापन हो जायेगा। साझेदारों की अधिकतम संख्या कितनी होनी चाहिए इस विषय पर साझेदारी अधिनियम तो शान्त है किन्तु कम्पनी अधिनियम (धारा 11) के अनुसार एक साझेदारी में 20 से अधिक (और बैंक की दशा में 10 से अधिक) व्यक्ति नहीं होने चाहिए और यदि अधिक होंगे तो साझेदारी अवैध्य समझी जायेगी।

(ii) गोपनीयता → संयुक्त पूँजी कम्पनी की भाँति साझेदारी के खातों को जनता में प्रकाशित नहीं करना पड़ता है और न इनका अंकेक्षण ही करना अनिवार्य होता है। इस प्रकार संयुक्त पूँजी कम्पनी की अपेक्षा इसमें गोपनीयता अधिक रहती है

Scanned with CamScanner

(iii) सुगमता से स्थापना → साझेदारी व्यापार की स्थापना बड़ी सुगमता से की जा सकती है। इसमें अधिक व्यय भी नहीं होता है तथा न कोई वैधानिक कठिनाई ही पैदा होती है। व्यापार को चलाने के लिए कोई भी दो व्यक्ति आपस में समझौता करके उसे शुरु कर सकते हैं।

(iv) ऋण मिलने में सुविधा → असीमित दायित्व होने के कारण प्रत्येक साझेदार की साख बनी रहती है। ऋणदाता किसी भी साझेदार की निजी सम्पत्ति से भी अधिक धन वसूल कर सकता है, अतएव अन्य व्यावसायिक संस्थाओं की अपेक्षा साझेदारी में ऋण सुविधा से प्राप्त हो जाता है।

(v) अधिक प्रेरणा → साझेदार यह जानते हैं कि उन्हें ही सब लाभ प्राप्त होगा तथा अगर हानि होगी तो भी उसे भी उन्हें ही सहन करना होगा इसलिए यह बात उन्हें अधिक काम करने के लिए प्रेरित करती है। साझेदारी में प्रयत्न और पुरस्कार में प्रत्यक्ष संबंध होता है जो कि काम करने की प्रेरणा देता है।

(vi) लोचदार संस्था → साझेदारी एक लोचदार संस्था है क्योंकि इसके उद्देश्य, सदस्यता और पूँजी आवश्यकतानुसार घटायी-बढ़ायी जा सकती है। इसके विपरीत कम्पनी में ऐसा परिवर्तन केवल सीमित अवस्थाओं में ही संभव हो पाता है।

(vii) अल्पसंख्यकों के हितों की रक्षा → साझेदारी का एक लाभ यह भी है कि इसमें वैधानिक रूप से साझेदारों के अल्पमत का संरक्षण किया जाता है। प्रत्येक महत्वपूर्ण कार्य में साझेदारों की सर्व सम्मति की आवश्यकता होती है और इस प्रकार बहुमत अल्पमत की अवहेलना नहीं कर पाता है, महत्वपूर्ण मामलों में अल्पसंख्यक साझेदारों को वीटो (veto) का अधिकार प्राप्त हो जाता है।

(viii) लोकतन्त्रीय आधार पर संगठन → साझेदारी का प्रबंध एवं संचालन उसके सभी साझेदारों द्वारा किया जाता है। सभी साझेदारों को व्यवसाय में समान रूप से भाग लेने का अधिकार होता है। इस प्रकार संचालन लोकतन्त्रीय आधार पर किया जाता है।

(ix) व्यवसाय में परिवर्तन की सुविधा → साझेदारी में सभी साझेदार मिलकर बिना किसी वैधानिक अड़चन के व्यवसाय में परिवर्तन कर सकते हैं। इसके विपरीत कम्पनी के व्यवसाय में परिवर्तन करना आसान नहीं होता है।

(x) रजिस्ट्रेशन अनिवार्य नहीं → भारतीय साझेदारी अधिनियम में साझेदारी फर्म के रजिस्ट्रेशन का प्रावधान है परन्तु रजिस्ट्रेशन कराना अनिवार्य नहीं है। साझेदारों को यह सुविधा दी जाती है कि वे उचित समझें तो फर्म का रजिस्ट्रेशन करावें अथवा नहीं।

P.T.O.

* साझेदारी के निम्नलिखित दोष हैं:-

(i) असीमित उत्तरदायित्व → साझेदारों का असीमित उत्तरदायित्व एक दुधारे शस्त्र की भाँति है। व्यावसायिक सफलता के दिनों में इसी असीमित उत्तरदायित्व के कारण फर्म को साख सुविधायें उपलब्ध होती हैं परन्तु संकटकालीन परिस्थिति में यह असीमित उत्तरदायित्व स्वयं साझेदारों के लिए घातक सिद्ध होने लगता है। फर्म में हानि हो जाने पर साझेदारों को न केवल अपनी पूँजी से हाथ धोना पड़ता है, बल्कि अपनी व्यक्तिगत सम्पत्ति को भी खोना पड़ता है।

(ii) अनिश्चित अस्तित्व → साझेदारी व्यवसाय का अस्तित्व अनिश्चित होता है। किसी भी साझेदार की मृत्यु, पागलपन, दिवालियापन अथवा अवकाश ग्रहण करने पर साझेदारी की समाप्ति हो जाती है।

(iii) संगठित निर्णय एवं प्रबंध में विलम्ब → साझेदारी में छोटे-छोटे कार्य से लेकर बड़े-से-बड़े कार्य तक के लिए प्रत्येक साझेदार से परामर्श लेना पड़ता है। इसके परिणाम स्वरूप निर्णय लेने में स्वाभावतः विलम्ब हो जाता है तथा अनेक लाभदायक सुअवसर हाथ से निकल जाते हैं। इस संबंध में एक अंग्रेजी कहावत है "To many cooks may spoil the business worth"

(iv) पूँजी के सीमित साधन → निःसन्देह एकाकी व्यापार की अपेक्षा साझेदारी के आर्थिक साधन अधिक विस्तृत होते हैं परन्तु कारोबार का आकार बड़ा हो जाने पर अथवा उसकी क्रियाओं में विस्तार हो जाने से पूँजी के साधन अपर्याप्त पड़ते हैं। इसका प्रमुख कारण यह है कि अधिनियम के अनुसार सदस्यों की संख्या सीमित होती है और प्रत्येक व्यक्ति के पूँजी के साधन सीमित होते हैं। अतः निरन्तर विकसित होने के कारण व्यवसाय के लिए साझेदारी उपयुक्त नहीं है।

(v) हित हस्तांतरण में कठिनाई → साझेदारी में कोई भी साझेदार बिना अन्य साझेदारों की सहमति के अपना हित असुविधा के कारण लोग उसमें रुपया लगाना पसन्द नहीं करते हैं, कम्पनी में हित का हस्तान्तरण अपनी इच्छानुसार किसी भी व्यक्ति को किया जा सकता है।

(vi) सदैव संघर्ष तथा मतभेद → प्रो० हैने के शब्दों में, "इस व्यवस्था का सबसे बड़ा दोष है केन्द्रित संचालन की कमी और सबसे बड़ी समस्या है प्रबंध में सबके हितों में सामन्जस्य स्थापित करना।" संघर्ष, मनमुटाव, मतभेद के कारण साझेदारी का व्यवसाय खतरे में पड़ जाता है। व्यक्तिगत स्वार्थों के कारण परस्पर सद्भावना नहीं रह पाती है।

— 0 —

Scanned with CamScanner